Inspira- Journal of Modern Management & Entrepreneurship (JMME)
(A National Multidisciplinary bi-lingual Quarterly Double Blind Open Access Peer Reviewed Refereed Journal)
ISSN : 2231–167X (Print), Impact Factor: (Cosmos: 7.866 & I2OR: 5.675) Volume 16, No. 04, October-December, 2026, pp. 95-103

भक्ति आन्दोलन एवं संत दादू दयाल का समाज दर्शन

डॉ. विनोद मील*

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग एस.के.डी. विश्वविद्यालय हनुमानगढ़।

*Corresponding Author: drvinodmeel@gmail.com

Citation: *मील, विनोद (2026). भक्ति आन्दोलन एवं संत दादू दयाल का समाज दर्शन. Journal of Modern Management & Entrepreneurship, 16(04), 95–103.*

सार

संत दादू दयाल ने सती प्रथा और पर्दा प्रथा पर आलोचना की और हिन्दू–मुस्लिम समन्वय के लिए अपील की। संत दादू दयाल का उद्देश्य पवित्र और सन्तुलित जीवन जीने का संदेश देना था। एक जीवन जो स्वाभाविक हो जिसमें कोई आडम्बर न हो बन्धुत्व और पारस्परिक सद्भाव के साथ आचारगत एवं आन्तरिक पवित्रता का अभाव न हो। इस प्रकार मध्ययुगीन सुधारकों में संत दादू दयाल का स्थान बहुत उच्च है। भारतीय धर्म साधना के इतिहास में सन्त दादू दयाल का समाज दर्शन अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। इसने कई धार्मिक एवं बौद्धिक परिस्थितियों का सामना करते हुए समानता और सहयोग के सिद्धांत पर चलते हुए पूरे राजपूताना को प्रभावित किया। धर्म का मूल रूप बाहरी सजावटों में छिप रहा था। ऐसी विषम घड़ी में दादू दयाल के समाज दर्शन ने आम जनता में नई ऊर्जा का प्रचार किया। मध्ययुग में राजपूताना की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति गिरते हुए थी। समाज में विभिन्न प्रकार की सामाजिक एवं धार्मिक गलतियों का विकास होने लगा था जो हिन्दू समाज को अस्थिर बना रही थी। राजपूताना में सती बलि पर्दा बहुविवाह और जौहर जैसी प्रथाओं के कारण सामाजिक व्यवस्था अस्थिर और झकझोर रही थी। इस संक्रमण और परिवर्तन के काल में, सन्त दादू दयाल ने आम जनता को अन्धकार निराशा और विषमता से बाहर निकालकर प्रकाश की ओर बढ़ना सिखाया और जीवन में आशा का संचार किया। सन्त दादू दयाल विनम्र उदार मृदुभाषी और सरल व्यक्तित्व के मालिक थे जिस कारण उनके समाज दर्शन को तत्वयुगीन समाज में राजपूताना में सबसे अधिक स्वीकार्यता मिली है।

शब्दकोशः *दर्शन, समाज, भक्ति, सगा, वेलणहारा।*

प्रस्तावना

मध्ययुगीन भारत में भक्ति आन्दोलन का उद्भव व विकास भारतीय समाज में एक प्रकार का पुनर्जागरण था। यह एक सांस्कृतिक जागरण भी था जिसमें जनमानस को जागृत व चेतना का संचार किया। भारत की भक्तिधर्मी सोच पुरातन है। भक्ति के अंकुर आद्य–ऐतिहासिक है। श्वेताश्वस्तरोपनिषद में सर्वप्रथम भक्ति का महत्त्व दिया गया – ''यस्यदेवे पराभक्ति यथा देवे तथा गुरौ। तस्यैते कथिता ह्यार्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।। इस उपनिषद में शरणागति भाव की ओर भी संकेत दिया गया है। महाभारत व गीता में प्राप्त भक्ति विषयक रूप उपनिषदों की भक्ति से मेल खाता है। भक्ति भावना के विकास में उपनिषदों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। रामायण महाभारत और पुराणों के काल में भक्ति का विकास अपने रूप में हुआ। भक्ति द्रविडों की देन मानी गई है। आलवार संतों

Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.

ने वेद उपनिषद गीता आदि से विचारों को ग्रहण कर उसमें युगानुकूल तत्वों का समावेश कर भक्ति धर्म को लोकधर्म का रूप दे दिया। भक्ति आन्दोलन रूढ़िवादी सामाजिक तथा धार्मिक विचारों के विरूद्ध हृदय की प्रतिक्रिया तथा भावों का उद्‌गार है। भारतीय परिवेश में भक्ति आन्दोलन का विकास इन्हीं परिस्थितियों का परिणाम है। भक्ति के सिद्धांत साधना के रूप में देश में बहुत प्राचीन काल से प्रचलन में है। इसी साधना या उपासना को भक्ति कहते हैं। भक्ति का लक्षण शाण्डिल्य सूत्र में इस प्रकार दिया गया है – ''सा परानुरक्तिरीश्वरे'' अर्थात ईश्वर के प्रति निरतिशय प्रेम को ही भक्ति कहते हैं। भागवत पुराण के अनुसार – श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्। अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम।।ख।,

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य भक्ति आंदोलन एवं संत दादू दयाल के समाज दर्शन का अध्ययन करना है।

- साहित्यावलोकन दक्षिण भारत में आलवार और नायनार संतों द्वारा जलाई गई भक्ति आन्दोलन की चिनगारी कुछ शताब्दियों में पूरे भारत में फैलकर प्रज्ज्वलित हो गई। संत दादू दयाल ने इस ज्योति को राजस्थान में फैलाने का कार्य किया। संत दादू दयाल ने ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और मुस्लिम समुदायों को भक्ति के रंगमंच पर मिलाकर समाज में अद्‌भुत सामंजस्य बनाया। संत दादू दयाल पर मध्ययुगीन भारत की ऐतिहासिक घटनाओं तथा बदलते हुए धार्मिक आन्दोलन का अवश्य प्रभाव पड़ा होगा।
- संत दादू दयाल की साधना देश और काल की ही साधना है। हर संत अपने युग को एक आवाज देता है। संत दादू दयाल का आविर्भाव भारतीय समाज में उस समय हुआ जब पूरा उत्तरी भारत मुगल साम्राज्य के अधीन था। बचपन से ही सामाजिक विषमता और आर्थिक कठिनाइयों ने उनकी सोच को गहराई से प्रभावित किया। संत दादू दयाल राजनीतिक सामाजिक धार्मिक और आर्थिक क्षेत्रों में क्रांति लाना चाहते थे जिसका आधार अहिंसक क्रांति भावना रखता था।
- संत दादू दयाल ने सामाजिक विषमता और धर्म को अकर्मण्यता से मुक्त करके कर्म योग की भूमि पर स्थापित किया था और उसे सहज बनाकर सामान्य जनता के लिए प्राप्य बना दिया। उन्होंने किसी भी धार्मिक विश्वास, लोक तथा वेद के अन्धानुकरण को स्वीकार नहीं किया बल्कि विवेक से उन धर्मों विश्वासों तथा पाखण्ड़ों को अपनी ध्वंसात्मक भूमिका से तहस–नहस करके ही दम लिया। संत दादू दयाल ने हिन्दू धर्म के आचारों के बाहुल्य जैसे पूजा उत्सव वेदपाठ तीर्थयात्रा व्रत छूआछूत अवतारोपासना और कर्मकाण्ड पर निरंतर व्यंग्य किया। उनकी बातचीत में शील क्षमा समानता दया दान धैर्य और संतोष जैसे मानवीय गुणों का विशेष महत्व है।
- भक्ति आन्दोलन के इतिहास में कबीरदास नानक और रैदास आदि को मिली हुई महत्ता के समान संत दादू दयाल और उनके विचारों को प्रमुखता नहीं मिली है लेकिन इसके बावजूद संत दादू दयाल के योगदान को कम नहीं किया जा सकता है। साहित्य समीक्षा पण्डित परशुराम चतुर्वेदी (सं.) दादू दयाल (ग्रंथावली) नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी संवत् 2023 आचार्य सूरजनदास (सं.) श्री दादू महाविद्यालय जयपुर 2009 बाबू बालेश्वरी प्रसाद (सं.) श्री दादू महाविद्यालय रजत ग्रन्थ दादू दयाल की बानी वेलवेडियर प्रेस प्रयाग (इलाहाबाद) संवत् 1928 काशीनाथ उपाध्याय (सं.) सन्त दादू दयाल राधास्वामी सत्संग ब्यास डेरा बाबा जैमन सिंह पंजाब 1980 डॉ. भगवन्त व्रत मिश्र सन्त कवि दादू और उनके काव्य सिकन्दरराऊ दिनेश प्रकाशन अलीगढ़ 1964
- मुख्य पाठ दादूवाणी में मध्ययुगीन समाज का स्वरूप संत दादू दयाल एक महान समाज सुधारक थे। हिन्दू समाज में जाति प्रथा नारी वर्ग का नैतिक अवमूल्यन पर्दा बाल विवाह निम्न जातियों पर उच्च वर्ग का घोर अत्याचार शिक्षा के अभाव में जादू–टोना शकुन–अपशकुन जीव हिंसा मांस भक्षण वेश्यागमन आदि अंधविश्वास तथा कुरीतियाँ समाज की जड़ों को खोखली कर रही थीं।

रंग एवं जाति–आधारित प्रणाली से संबंधित विचार

मध्ययुगीन संत ज्ञान–मार्ग के यात्री साधक और भक्त थे। उनकी साधना ने सामाजिक जीवन को जीता है लेकिन सामाजिक असंपृक्तता को भी रही है। मध्ययुगीन संतों में कबीरदास पहले ऐसे प्रमुख संत थे जिन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों और कुरीतियों पर निर्भीक रूप से बड़ा ही तीखा प्रहार किया। संत दादू दयाल भी कबीर की ही परंपरा के संत थे और उन्हीं की तरह समाज के उपेक्षित वर्ग से आए थे लेकिन उस समय तक संत कबीर द्वारा प्रसारित निर्गुण साधना विशेष रूप से चर्चित हो चुकी थी।

संत दादू दयाल के स्वभाव में कबीर के फक्कड़पन के स्थान पर विनय और माधुर्य का एक विशेष मिश्रण रहता था।

संत दादू दयाल समाज में एकता और समता के दृढ़ समर्थक थे। इसलिए उन्होंने वर्ण एवं जाति की व्यवस्था के खिलाफ भरसक विरोध किया। संत दादू दयाल के मतानुसार जन्म से ही किसी व्यक्ति की जाति का निर्धारण नहीं किया जा सकता बल्कि उसके कर्म ही उसे समाज में ऊँचा या नीचा बनाते हैं। जैसे कि अगर एक सोने का सुन्दर कलश विष से भरा हो तो वह व्यर्थ है क्योंकि विष के सेवन से मृत्यु हो जाएगी। उसी प्रकार यदि किसी उच्च जाति के व्यक्ति के हृदय में विषय विकार भरा हो तो उसकी उच्च जाति व्यर्थ है। इसलिए निम्न कुल से जन्मे व्यक्ति अधिक महान हैं जिनके हृदय में अमरत्व भरा हुआ है क्योंकि उनसे समाज का हित होता है। जैसे–

दादू कनक कलश विष सौं भरा सो किस आवे काम।
सो धन कूटा चाम का जामें अमृत राम।।[2]

अर्थात यदि मलिन चमड़े का कुप्प अमृत से भरा हो तो अमर करने वाला होने से धन्य है। जैसे ही शरीर बाह्य रूप से सुन्दर होता है लेकिन आंतरिक भावनाएँ विषय विकार और विष से भरे हुए हों तो वह त्याज्य है। संत दादू दयाल ऊंची जाति के बजाय उसके अंतःकरण की सुन्दरता को देखते हैं।

दादू देखे वस्तु को बासन देखे नांहिं।
दादू भीतर भर धरा सो मेरे मन मांहिं।।[3]

अर्थात् व्यक्ति अपने जन्म से नहीं बल्कि कर्मों से ही उच्च या निम्न जाति का बनता है इसलिए साधुओं की कोई जाति नहीं होती चाहे वह किसी भी जाति में जन्मा हो।

जे पहुँचे ते कह गये तिन की एकै बात
सबै सयाने एक मत उनकी एकै जात।।[4]

उन्होंने ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्ण को अपनी बातचीत का माध्यम न मानते हुए शूद्रों पर किए गए भेदभाव की आलोचना की। उनका प्रमुख लक्ष्य मानव–मात्र में समता और विश्व–बन्धुत्व की स्थापना थी।

आये एकंकार सब, सांई दिये पठाइ
आदि अंत सब एक है, दादू सहज समाइ।[5]

संत दादू दयाल अपने पूर्ववर्ती मध्यकालीन संतों विशेषकर कबीर से बहुत प्रभावित थे और उन्हीं की भांति वे भी समाज में फैले वर्ण–भेद जाति–पांति एवं ऊँच–नीच की भावना के विकास का जिम्मेदार ब्राह्मणों पुरोहितों और मुस्लिम धर्म गुरूओं को मानते थे। हालांकि दादू दयाल ने कबीर की भांति कभी भी कठोर या तीखी भाषा का प्रयोग नहीं किया फिर भी वे सहज रूप से सही दादू दयाल हमेशा उनकी नीतियों क्रियाकलापों और विचारों के विरोध में रहे हैं। उनका मानना था कि ब्राह्मणों ने ही मानव जीव को अनेक नाम वर्ण और जातियों में बँट दिया है। संत दादू दयाल ने सभी को एक समान रूप से स्वीकार किया और सबका मालिक भी एक ही माना।

मध्ययुगीन भारत में समाज के संचालन का काम ब्राह्मण और क्षत्रिय ही करते थे। ब्राह्मणों के पास समाज में वर्चस्व था और अछूतों को धार्मिक और आध्यात्मिक स्वतंत्रता नहीं मिलती थी। ज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में सिर्फ ब्राह्मणों का ही प्रभुत्व रहता था। सन्त दादू दयाल ने अपनी रचनाओं में ब्राह्मणों की सर्वोच्चता का खंडन किया और कहा कि ज्ञान व्यर्थ है जिससे कोई लाभ न मिले और सत्य मार्ग की प्राप्ति भी न हो।

पढ़े न पावे परमगति पढे न लंघे पार।

पढ़े न पहुँचौ प्राणियाँ दादू पीड़ पुकार।।[6]

संत दादू दयाल के अनुसार जाति मूलक सामाजिक व्यवस्था भ्रमपूर्ण है। लोग भ्रम में फंसकर अपने को ऊँची जाति और निम्न कुल कहने लगते हैं। जैसे एक ही कुएं का पानी अलग–अलग बर्तनों में भरकर ब्राह्मण उसे विभिन्न नामों से पुकारने लगते हैं जबकि वास्तव में पानी में कोई अंतर नहीं है। जैसे एक आत्मा में शरीर के भेदों से जाति की कल्पना कर लेते हैं –

दादू पानी के बहु नाम धर नाना विधि की जात।

बोलणहारा कौन है कहो धौं कहाँ समात।।[7]

संत दादू दयाल के मत से मनुष्य को जाति भेद के इस भ्रम में पड़ना नहीं चाहिए क्योंकि आध्यात्मिक रूप से आत्मा सभी स्थानों में व्याप्त है। सभी प्राणी एकत्वपूर्ण हैं क्योंकि उनका चरम सत्य समान है। सभी के शरीर में एक समान जाति का रक्त प्रवाहित होता है। सभी प्राणियों के शरीर में एक ही प्रकार के हड्डी–मांस से निर्माण हुआ है। सभी में एक समान रूप से जीवन व्याप्त है। सब कुछ एक ही प्रकृति द्वारा बना है। समाज में मौजूद पारस्परिक भेदभाव को त्यागकर सभी को समानता के साथ रहना चाहिए। जाति, वंश, कुल या वर्ण के आधार पर अभिमान छोड़ देना चाहिए क्योंकि सभी एक ही प्रभु की पुत्री या पुत्र हैं। एक ही प्रभु की सन्तान होने के कारण सभी व्यक्तियों की जाति एक ही है।

दादू एक सगा संसार में जिन हम सिरजे सोइ।

मनसा वाचा कर्मना और न दूजा कोइ।।[8]

संत दादू दयाल एवं उनके समकालीन सन्तों ने निम्न जातियों पर किए गए उपकार कभी भी भारतीय समाज भुला सकता नहीं है। उन्होंने निचले समाजी स्तर से ऊपर उठकर दिखाया कि अनवरत तपस्या और साधना के माध्यम से वे उच्च जातियों से भी आगे बढ़ सकते हैं। उन्होंने न केवल निम्न जातियों को समाज में समानता का अधिकार दिलाया बल्कि उन्हें समाज की मुख्यधारा में वापस लाते हुए इस्लाम धर्म की ओर प्रवृत्त होने से भी बचा लिया। संत दादू दयाल की साधना मानव धर्म की साधना थी। उनके किसी से भी कोई विरोध नहीं था। उनके हृदय में समाज में फैली घोर असमानता के लिए गहरी दुख की भावना रहती थी।

वे सिर्फ यही चाहते थे कि मनुष्य का मूल्यांकन धन पद या वंश के आधार पर न हो बल्कि शुद्ध रूप से कर्म पर होना चाहिए। संत दादू दयाल ने अपने विचारों के माध्यम से नए मानवीय मूल्यों की स्थापना के साथ ही समाज में समानता बंधुत्व और सौहार्द का प्रचार करके समतामूलक समाज की निर्माण कार्य को सफल बनाया।

अस्पृश्यता से संबंधित विचार मध्ययुगीन भक्तिकाल में वर्ण और जाति–पाँति के साथ–साथ समाज में फैली ऊँच–नीच और छुआछूत की भावना ने भारतीय समाज को पतन की ओर ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। ऊँच–नीच एवं छुआछूत (अस्पृश्यता) की भावना हिन्दू समाज का प्राचीन अभ्यास है जिसके निर्माण में संत कबीर रैदास नानक एवं दादू दयाल जैसे संतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सर्वप्रथम कबीर ने छुआछूत को मानने वालों पर कटाक्ष करते हुये कहा –

पंडित दुखहु मनमंह जानी
कहु द्यौ छूति कहां ते उपजी
तबहिं छुति तुम मानी।

दादू दयाल के संत कवि होने के कारण वे समाज के संरक्षक और पोषक भी थे। वैमनस्यता और विषमता की अवस्था ही विनाश का कारण बनती है इस बात को समझते हुए उन्होंने मध्ययुगीन समाज में मौजूद ऊँच–नीच और छुआछूत जैसी घृणित भावनाओं के खिलाफ लड़कर उन्हें पूर्णतः समाप्त करने और समाज में समानता और भ्रातृत्व की भावना को जन्म देने का सराहनीय प्रयास किया।

दादू सम करि देखिए कुंजर कीट समान।
दादू दुवध्या दूरि करि तजि आपा अभिमान।।

मनुष्य जन्म से नहीं वरन् कर्म से उच्च वर्ण का या निम्न वर्ण का होता है

दादू करणी उपरी जाति है दुजा सोच निवार।
मैली मध्यम है गये उज्जवल ऊंच विचार।।

उनका मानना था कि ब्राह्मण और शूद्र हिन्दू और मुसलमान सभी एक ही परम ज्योति से उत्पन्न हुए हैं और उन सभी में एक ही आत्मा रहती है। उनका मानना है कि ईश्वर हर कण में व्याप्त है और कोई भी निम्न जाति का व्यक्ति प्रभु की भक्ति कर सकता है। ईश्वर की पूजा सिर्फ़ उच्च वर्ण की सम्पत्ति नहीं है क्योंकि परमात्मा का वास सभी जगह है उसके पास कोई ऊँचाई नहीं है नीचाई भी नहीं। इस संदर्भ में उन्होंने अपनी बात में स्पष्ट रूप से कहा है–

दादू सब रंग रंगि रहया दूजा कोई नाहिं।
सब रंग तेरे तै रंगे तू ही सब रंग माहिं।।[9]

उन्होंने समस्त मानवों चाहे वह किसी भी धर्म जाति या वर्ण के हों समान माना है तथा निम्न जातियों में आत्म विश्वास जागृत करते हुए ईश्वर की कोख से ही सबकी उत्पत्ति बतायी है –

दादू किस सौ बैरी है रहया दूजा कोई नाहिं।
जिसके अंग तै उपजे सोई है सब माहिं।।

सभी प्राणियों की उत्पत्ति या प्रजनन एक ही ब्रह्म या बीज से हुई है इसलिए सभी मनुष्य एक ही परिवार के सदस्य हैं –

आतम भाई जीव सब एक पेट परिवार।
दादू मूल विचारिए तौ दूजा कोण गंवार।।

इस प्रकार सन्त दादू दयाल ने अपने विचारों और कार्यों के माध्यम से समाज में व्याप्त विषमता एवं वैमनस्यता के भाव का खण्डन करते हुए समाज में समन्वय की भावना को बढ़ावा दिया। वे चाहते थे कि कीरी से कुंजर तक के सभी को एक ही दृष्टि से देखा जाए। उनका कहना था कि सभी में एक ही आत्मा है और सभी एक हैं।

धार्मिक विचार सन्त दादू दयाल मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन के प्रमुख सन्त साधक विचारक एवं समाजहित चिन्तक थे। उन्होंने अपने विचारों और कार्य प्रयासों के माध्यम से समाज की सामाजिक–धार्मिक

परिस्थितियों को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। संत दादू दयाल ने सम्प्रदाय और मतवाद से ऊपर उठकर प्रेम पर विशेष जोर देते हुए कहा है कि प्रेम भक्तों का सम्प्रदाय और पथ है।

दादू इश्क अलाह का जे कबहूँ प्रगटे आई।
तौ तन मन दिल अरबाह का सब पड़दा जलि जाई।।

उन्होंने हिन्दू और इस्लाम दोनों धर्मों में मौजूद जड़–मूल्यों का प्रभावी तरीकों से खण्डन किया। उन्होंने इस संबंध में कहा कि यदि किसी व्यक्ति का मन और हृदय पवित्र है तो वह वास्तविक रूप से धार्मिक है। ऐसे इन्सान को बाहरी आडम्बरों पर निर्भर करना चाहिए नहीं। उन्होंने बाहरी आचरण और प्रतिष्ठित मूल्यों का खंडन करते हुए कहा है –

रहे निराला सब करैं काहू लिपत न होई।
आदि अन्त भानै घड़े दादू समरथ सोई।।[10,]

भारतीय समाज में झूठे भ्रम एवं कर्म के लिए एक मात्र ब्राह्मण एवं पुरोहित वर्ग को ही संत दादू दयाल ने कारण माना है। उनके कथानानुसार–

दादू पंडित निबरे नांव बिन झूठे कथै गियान।
बैठ सिर वाली करैं पण्डित वेद–पुराण।।

उन्होंने सभी को अपने–अपने धर्म को मानने तथा प्रभु–भक्ति करने का समान अधिकार प्रदान करते हुए भक्ति को वर्ण–जाति से निरपेक्ष बताया है।

हिन्दू कर्मकाण्ड से संबंधित विचार संत दादू दयाल के काल में धर्म का स्वरूप बहुत हद तक विकृत हो चुका था और धर्म के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के बाह्याचार आडंबर और पाखण्डों का बोलबाला चल रहा था। समाज में मूर्ति–पूजा तीर्थ–व्रत स्नान सिर–मुण्डन माला–जाप बहुदेववाद नमाज रोजा आदि बाह्यचारों की निन्दा करते हुए उनको नकार दिया।

संत दादू दयाल के अनुसार जो लोग कंकड़–पत्थर की मूर्ति पूजन के रूप में उपासना करते हैं वे भक्ति के सार तत्व को खो देते हैं। उन्हें सत्य का ज्ञान नहीं है और सत्य का तत्व भी उन्हें दिखाई नहीं देता परमात्मा घट–घट में व्याप्त है इसलिए मंदिरों में उसकी पूजा करना बर्बाद है

दादू जिन कंकर पत्थर सेविया सो अपना मूल गँवाई।
अलख देव अंतर बसे क्या दूजी जगह जाई।।[11,]

जैसे कागज का मानव बनाकर उसे मानवों का शिरोमणि चक्रवर्ती राजा बना दिया जाय तो भी वह राज्य शासन की व्यवस्था तो नहीं कर सकेगा–

कागद का मानुष किया छत्रपति शिरमौर।
राज पाट साधे नहीं दादू परिहर और।।[12,]

लकड़ी की कामधेनु दूध नहीं दे सकती –

कामधेनु के पटतरे करे काठ की गाई।
दादू दूध दूझे नहीं मूरख देहु बहाइ।।[13,]

स्फटिक जाति के पत्थर का भी सूर्य बनाया जाय तो भी उससे अंधकार नष्ट न होगा –

सूरज फटिक पषाण का ता सौं तिमिर न जाई।
सचा सूरज परकटे दादू तिमिर नशाई।।

किसी पत्थर को पारस मान ले तो भी उससे लोहा सुवर्ण नहीं बन सकता–

पारस किया पषाण का कंचन कदे न होई।
दादू आतम राम बिन भूल पड़या सब कोई।।

अज्ञानी प्राणियों को सत्य परमात्मा का स्वरूप तो दिखाई नहीं देता। इसलिए उन्होंने पत्थर की मूर्ति घड़ कर उसे ही भगवान बना दिया –

मूर्ति घड़ी पाषाण की कीया सिरजनहारा।
दादू साच सूझे नहीं यों डूबा संसार।।14,

संत दादू दयाल तीर्थ–व्रत और यात्रा के खण्डन करते हुए कहते हैं कि यह बड़ा आश्चर्य की बात है कि कुछ लोग द्वारिका काशी मथुरा आदि तीर्थ स्थलों पर जाकर परमात्मा और मोक्ष को प्राप्त करना चाहते हैं। उन्होंने इनकी निंदा करते हुए कहा कि परमात्मा मानव के हृदय में ही विराजमान है।

दादू केई दौड़े द्वारिका केई काशी जांहि।
केई मथुरा को चलें साहिब घट ही मांहि।।15,

उनका कहना है कि तीर्थ–व्रत करने से बुरे कर्मों का फल नहीं रोका जाता और न ही इससे किसी को स्वर्ग प्राप्त होता है। यह सब कुछ पण्डितों का ही भ्रम है। वे ही हैं जिन्होंने इस भ्रम के जाल में सभी को फँसा रखा है–

सबहीं ज्ञानी पंडिता सुर नर रहे उरसाई।
दादू गति मोव्यंद की क्यों ही लषी न जाई।।

संत दादू दयाल ने धार्मिक क्षेत्र में फैले आडंबरों के पीछे काजी व ब्राह्मण का हाथ बताते हुए दोनों को बावरा कहा है–

दादू जिहिवरियां यह सब कछु भया सौं कछु करौं विचार।
काजी–पंडित बावरे क्या लिखि बंधे भार।।
काजी कजा न जानही कागज हाथ कतेब।
पढ़तां पढतां दिन गये भीतर नाहीं भेद।।16,

संत दादू दयाल ने पंडितों योगियों व ढोंगी साधुओं के वेशभूषा धारण करके जनता को ठगते हैं।

उसका चित्रण करते हुए दादू दयाल कहते हैं –

कुम्भ गाड़ि आसन तले दीपक धरि ढकि मंहिं।
लोकन कूं कहि रात कूँ ब्रह्म जोति दस्साहिं।।

संत दादू दयाल ने हिन्दुओं के साथ–साथ मुसलमानों द्वारा किए जाने वाले हज रोजा और नमाज को भी बाहरी आडंबर और मिथ्या मानते हुए कहा है कि हृदय में खुदा का नाम याद करना चाहिए।

हर रोज हजूरी होइ रहु काहे करे कलाप।
मुल्ला तहां पुकारिये जहँ अर्श इलाही आप।।17,

संत दादू दयाल ने काया रूपी महल में नमाज पढ़ने की बात कही है –

दादू काया महल में नमाज गुजारूं तहँ और न आवन पावे
मन मणके कर तसबीह फेरूं तब साहिब के मन भावे।।18,

संत दादू दयाल ने ईश्वर की व्यापकता और गुरू की महत्ता पर विशेष जोर दिया। सभी मनुष्यों में समानता की भावना जाग्रत करने तथा निम्न वर्गों के लोगों के लिए जाति भेद वर्ग भेद लिंग भेद आदि को अनुचित ठहराया है। संत दादू दयाल ने मनुष्य–मनुष्य में किसी भी प्रकार के भेदभाव को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने हिन्दू धर्म में जाति भेद और छुआछूत की सीमित और कठोर भावनाओं को चुनौती दी और इस पर उचित अंशों तक सफलता प्राप्त की। संत दादू दयाल के प्रभाव से शूद्रों में भी धार्मिक नवजागरण हुआ जिसके साथ–साथ उन्होंने सामाजिक महत्व प्राप्त किया और आध्यात्मिक क्षेत्र में भी उन्नति की।

संत दादू दयाल की वाणी ने ढूंढाड क्षेत्र में मानवतावाद के लिए उचित वातावरण बनाया। साथ ही दो परस्पर विरोधी धर्ममतावलम्बियों के बीच एक दूसरे के धर्मों के प्रति सहिष्णुता की भावना के उत्पत्ति का श्रेय दिया जा सकता है। उनकी बातचीत ने हिन्दू–मुस्लिम समाज में एकता का मंत्र फूंका और उसकी सीमा तक पहुँच के साथ एकता को बढ़ाने में सफलता प्राप्त की।

निष्कर्ष

संत दादू दयाल ने अपनी वाणी में प्राचीन काल में चलन में रहने वाले धार्मिक आडम्बरों और जटिल तरीकों पर कठोर टिप्पणी की गई। तीर्थ यात्राएँ हज की यात्रा और व्रतों को अनावश्यक सिद्ध किया गया। अध्ययन एवं चिन्तन मनन के महत्व को कम कर दिया गया और हृदय के प्रेम व भक्ति से की जाने वाली रामनाम या नाम रूपी ईश्वर पूजा को ही ईश्वर प्राप्ति का सर्वोत्तम मार्ग माना गया।

उत्तरी भारत में भक्ति भाव को प्रतिष्ठित करने में सन्त दादू दयाल का महत्व कबीर और नानक के समान है। मध्ययुगीन समाज में सन्त दादू दयाल के उत्थान के समय जो परिस्थितियाँ रहीं और जिन राजनीतिक सामाजिक एवं धार्मिक विकृतियों का सामना उन्हें करना पड़ा उसके कारण उनके व्यक्तित्व एवं काव्य को विशेष ध्यान मिला है। संत दादू दयाल के समाज दर्शन का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त रूढ़ियों और अन्धविश्वासों का खण्डन करना एवं मानव एकता तथा सहअस्तित्व की भावना को जाग्रत करना रहा है। उन्होंने अपनी बातचीत में सामाजिक विचारों और जनमन की आवाज़ को बेबाक लेकिन शांतिपूर्ण भाव से उठाया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी, पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त दया निवैंरता का अंग–22 पृ.सं. 731
2. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) 2017भेष का अंग–8 पृ.सं. 291
3. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त भेष का अंग–9 पृ.सं. 291
4. पूज्य महामंडलेश्वर आत्माराम स्वामी व्याकरण वेदांताचार्य श्री दादू द्वारा बगड़ जिला झुंझुनू राजस्थान पूर्वोक्त साच का अंग–164 पृ.सं. 289
5. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त साच का अंग–88 पृ.सं. 275
6. श्रीमद्भागवत महापुराण स्कंध 7 अध्याय 5 श्लोक 23 गीता प्रेस गोरखपुर 2000
7. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त साच का अंग–116 पृ.सं. 280
8. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त निष्कामी पतिव्रता का अंग–16 पृ.सं. 183
9. शर्मा वासुदेव संत कवि दादू और उनका पंथ पृ.सं. 179–180 शोध प्रबन्ध प्रकाशन नई दिल्ली 1969
10. चतुर्वेदी परशुराम दादू दयाल ग्रन्थावली सांच का अंग पृ.सं. 155 नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी सं. 2023

11. पूज्य महामंडलेश्वर स्वामी आत्माराम जी व्याकरण वेदांताचार्य श्री दादू द्वारा बगड़ जिला झुंझुनू राजस्थान पूर्वोक्त साच का अंग–122 पृ.सं. 281
12. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर राजस्थान पूर्वोक्त माया का अंग–150 पृ.सं. 256
13. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त माया का अंग–144 पृ.सं. 255
14. पूज्य महामंडलेश्वर स्वामी आत्माराम जी व्याकरण वेदांताचार्य श्री दादू द्वारा बगड़ जिला झुंझुनू राजस्थान पूर्वोक्त माया का अंग–148 पृ.सं. 256
15. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त साच का अंग–130 पृ.सं. 283
16. संत कविरत्न स्वामी नारायण दास जी पुष्कर (राजस्थान) पूर्वोक्त साच का अंग–92 पृ.सं. 276
17. पूज्य महामंडलेश्वर स्वामी आत्माराम जी व्याकरण वेदांताचार्य श्री दादू द्वारा बगड़ जिला झुंझुनू राजस्थान पूर्वोक्त साच का अंग–46 पृ.सं. 267
18. पूज्य महामंडलेश्वर स्वामी आत्माराम जी व्याकरण वेदांताचार्य श्री दादू द्वारा बगड़ जिला झुंझुनू राजस्थान पूर्वोक्त साच का अंग–42 पृ.सं. 267

❑❑❑